हमारे प्यार का बन्धन

Our Family Life- Our Bond of Love

HINDI NOVEL

HAMAARE PYAAR KA BANDHAN

Dr Ram Lakhan Prasad

हमारे प्यार का बन्धन

Hamare Pyaar Ka Bandhan

Story of Our Family Life

The Prasad Family

1940 to 2013

हमारे प्यार का बन्धन

पोथी पढ़ पढ़ जग मुआ पंडित हुआ न कोय

ऐकै अक्षर प्रेम का, जो पढ़ा तो पंडित होय

यह अपनी ही राम कथा है । सब सच है, भावपूर्ण भी है, दिलचस्पी से भरपूर है । जरा आगे पढ़ कर तो देखिये की हमारे जीवन के पचपन वर्ष फीजी में कैसे बीते थे । मैं ने भी कभी किसी से प्रेम किया था । यही हमारे प्यार का बन्धन है जिसे हम निभाये जा रहे थे और निभाते रहेंगे । पर मेरी जिन्दगी मुझे धोखा दे गई ।

इस दुनियां में अगर किसी भी इनसान को खुशी या सुख से अपना जीवन बिताना है तो उस को अपना सच्चा प्यार किसी खास व्यक्ति को दे कर उस का पवित्र प्यार लेना पड़ेगा । इस के लिये ठोस आचार विचार, शान्त चित, अत्यन्त शीतल सौभाव, गहरे भावनायें और सुन्दर व्यक्तित्व की आवशयकता है पर जरूरी नहीं है ।

अब आप शायद यह सोच में पड़ गये होंगे की इस कलियुग में ऐसा व्यक्ति कहां मिलेगा । यह आप की गलतफेहमी है कयोंकि मैं एक ऐसे ही विशाल दिल वाली और महान भावनाओं से भरपूर युवती

की जिक्र कर रहा हूँ जिस से मैं बेहद प्यार करता था , करता हूँ और करता रहूँगा ।

उन का नाम सरोज थी और वे ही हमारे जीवन की सब से महत्वपूर्ण अंग बन कर मेरे जिन्दगी में आज से पचास साल पहले अत्यन्त प्रीत, हार्दिक स्नेह और अपना बेजोड़ व्यक्तित्व लेकर हम को कृतार्थ करने स्वयं चली आई थी । यही मेरे लिये कुदरत की करिशमा थी और मेरे लिये एक सोभायुक्त तकाज़ा बन गया है ।

सब धरती को कागज़ करूँ, लेखनी बने सब बनराय,

सात समुद्र की सियाही हो, सरोजगुण लिखा न जाय ।

सुना था और पढ़ा भी था कि नाम का प्रभाव हर एक व्यक्ति पर होता है । इसी लिये सरोज के माता पिता ने अपने पहली दुलारी सुकन्या का नाम कमल जैसे सुन्दर और पवित्र फूल से तुलना कर के रखा था । यह सच था कि जैसे एक झील में कमल का खिलता हुआ फूल लहरा रहा हो ठीक उसी तरह सरोज भी अपने माँ बाप के आंगन में बीस वषों तक चहकती महकती रही । वही सरोज ने मेरे जीवन में भी सुख, संतोष और प्रेम के ढेर लगा दी थी ।

सरोज के पिता पंडित चंदरपाल शर्मा सरकारी नौकरी में लगे थे और सरोज की माँ लीलावती एक घर गृहस्थी सम्भालने वाली क्षत्राणी थी । नौ बच्चों में सरोज ही सब से बड़ी थी । सरकारी नौकरी में उन की समय समय पर जगह जगह की बदली होती रही थी । उन्हे अपने बेटी के शिक्षा दिक्षा का बड़ा ख्याल था इसलिये वे

सरोज को छोटे ही उम्र में शहर के मानेजाने हिन्दुस्तानी लड़कियों का एक इसाई धर्मावलम्बी बोर्डिंग स्कूल में दाखिल करा दिया था।

अपने घर और परिवार के श्रेष्ट संसकार,आचार विचार और कायदा कदर तो सरोज को मिला ही था पर डेडली हाउस के प्रमुख, विशिष्ट गुण वाले और उत्कृष्ट अध्यापिकायें, मिस केमबल और मिस फेनिबल का पूर्ण आशीर्वाद भी इन के साथ था।

सरोज अठारह वर्ष के उम्र में बड़े संलगनता से अपनी हाई स्कूल सेटीफिकेट की शिक्षा सफलता से पूरी कर के १९५९ में एक अध्यापिका का कोस करने नसीनू टीचस कोलेज में दाखिल हुई।

हिन्दू धर्म में गुरू का महत्व बहुत ऊँचा माना जाता है और उन के परिवार वाले उन के लिये यही पेशा उपयुक्त समझा था। माता पिता और सब परिवार का दिल खुशियों से भर गया और वे भगवान से यही प्रार्थना करते रहे कि उन की बेटी दो वर्षो में एक सफल अध्यापिका बन कर निकले और देश तथा समाज के सेवा में सनलगन हो जाये।

माँ बाप की ऐसी आर्शीवाद और आकांक्षा कभी भी खाली नहीं जाती है । अपनी मेहनत से सरोज बढ़ती गई, पढ़ती गई और ऊँचे से ऊँचे सीढ़ियों पर चढती गई। समय आने पर सरोज को बड़े शौक से नसीनू ट्रेनिंग कोलेज में सकुशल दाखिल किया गया।

यहीं इन से मेरी पहली मुलाकात हुई थी जब मैं उस कोलेज का दूसरे वर्ष का होनहार और एक जिम्मेदार विद्यार्थी था। मैं वहां के स्टूडेन्ट कौंसिल का कोषाध्यक्ष बना दिया गया था। सरोज को वहां

के लाइब्रेरी यानी पुस्तकालय की देखभाल करने को कहा गया था।

वह दिन आज भी मुझे शीशे की तरह साफ नज़र आता है। वो शुभ घड़ी हमारे जीवन का एक बहुत ही महत्वपूर्ण पहलू हो गई थी। आज भी उस की भाव या छवि हमारे चेहरे पर एक अजीब सी खुशी ला देती है जिस से अकस्मात ही मेरे होंठों पर मनभावन मुस्कान बिखेर देती है।

यही घटना मेरे लिये पहली नज़र में प्यार बन गई थी। वह प्यार जो दिल के हर तार को छू और छेड़ कर किनते मधुर गीतों की गुनजार सामने ला पटकी थी। दिल और दिमाग में कई ऊँचे ऊँचे प्रेम की लहरें उठने लगी थी। यह कोई पागलपन नहीं था पर एक असीम सचाई मेरे मन मंदिर को हिलोर रही थी।

मेरा बचपन एक किसानी परिवार में साम्बेतो गाँव के शान्त वातावरण में खेलकूद में ही बीत गया था। माता पिता बहुत पढ़े लिखे नहीं थे। साधारण किसानी करते थे इसलिये अपने जेष्ट पुत्र की शिक्षा दिक्षा का उन को बहुत ख़याल था। मेरा लड़कपन भी लापरवाही में साथिओं और सहपाठियों के साथ ग्रामीण माहौल में गुजरा था। लेकिन मेरी जवानी ने मेरे लिये एक अजीब सी पहचान दे दी थी।

उस जमाने में मैं प्रसिद्ध हिन्दी लेखकों कुष्वाहकान्त, प्यारेलाल आवारा और प्रेमचंद के रचनाओं में लीन रहता था। इन रोचक कहानियों ने मुझे अपने भविष्य के कई सपने सजाने का मौका

प्रदान किया था । वैसे सुहाने सपने जिन्हे थोड़े से लगन और परीश्रम से ही साकार किया जा सकता था ।

इन्हीं सपनों के दौरान, जवानी में नताम्बुआ हाय स्कूल का सफल विद्यार्थी होने के नाते मैं ने मन में एक बड़ी खूबसूरत तस्वीर बनाई थी । मेरी चाहने वाली एक अति सुन्दर पर साधारण युवती होगी जिस का मुख गोला होगा, मदभरी चमकीली आंखे होंगी, लम्बे बाल होंगे, उस के चाल मतवाली होगी, वह फूल सी सुन्दर और झील सी शान्त स्वाभाव वाली होगी । वही परी मेरी एकमात्र रानी बनेगी ।

अचानक आज उस प्रतिभाशाली मनभावन और नयनाभिराम मूरत को अपने सामने देख कर मेरा तन मन सब खिल उठा और मैं एक तरह से त्रिप्त हो गया था । मेरे सपनो की रानी मुझे मिल गई थी । अब मुझे कोई ऐसा यत्न करना था जिस से मैं उस के प्यार के काबिल बन जाऊँ और उस का प्रेम हासिल कर सकूँ ।

जनवरी महीने की अन्तिम सोमवार का सूरज निकल चुका था । कोलेज की छः बजे की डुग्गी ने हम सब को जगा दिया था । सब बिद्याथियों को हर सुबह एक घण्टे की अपने अपने काम करने पड़ते थे । मेरा कर्तव्य सभी विद्यार्थियों के कामों की निगरानी रखना था । इस के लिये हर सुबह मैं कोलेज के एक दो चक्कर लगाया करता था । उस दिन मेरे बढ़ते हुये कदम अचानक कोलेज के पुस्तकालय के सामने टिक गये थे । मैं चाह कर भी आगे नहीं बढ़ सकता था ।

मेरे नजरों के समक्ष मेरे सपनों की रानी, मेरे मन की तरंग, मेरे जीवन की डोर, मेरे दिल की धड़कन, मेरे भविष्य की जीवन साथी और मेरे दिमाग की शान्ति उस पुस्तकालय के बरामदे को साफ कर रही थी। मेरे चलते हुये पैरों में तो जैसे किसी ने गन्ने वाली गाड़ी के चाख लगा दिये थे। मैं वहीं खड़े हो कर उस खिली हुई फुलझड़ी से बाते करने और उसे के उस मन मोहनी और मोहक मुखड़े को जी भर के देखने के लिये आतुर हो गया। इसी बहाने मै ने उस से बड़े नम्रता से सादर नमस्तकार किया।

वह आहस्ते से मुड़ कर मेरे तरफ देख कर एक दिल को हिला देने वाली अत्यंत मनोरंजक मुस्कान से मेरे मन को प्रफुल्लित करती हुई मेरे शुम नमस्तकार का दिली जवाब एक मधुर 'गुड मोर्निगं' से दिया। उस अभिनन्दन की झनकार आजभी मेरे कानो मे हो रही है।

मेरा दिल बाग बाग हो गया। मेरा जीवन मानो सार्थ हो गया। उस दिन मेरे हर अंग में एक चंचल फड़कन हो रही थी। हम दोनों के बीच केवल कुछ ही जरूरी काम की बातें हो पाई थी पर यही हमारे पहली मुलाकात के लिये काफी थी। जब तक मैं उन के पास था तब तक मेरी जालिम नज़र उन के अति सुन्दर मुखड़े से हटती ही नहीं रही । इसी मन के भावना को शायद शायरों ने पहले नज़र में प्यार होने का नाम दिया है।

रोज के शुभ मधुर मिलन के लिये मन उत्सुक रहने लगा था और हम दोनों में दोस्ती बढ़ती गई। अब हम साथ साथ रोजीना एक ही मेज़ पर बैठ कर नाशता भी करने लग गये थे। फिर धीरे धीरे दोपहर का भोजन और शाम की प्रतिभोज भी इकठा होने लगा था।

भले उन खाने वाले मेज पर अन्य लोग रहते थे पर हम दोनों के दिल ऐसे घुलमिल चुके थे कि हम किसी दूसरे की फिकर नहीं करते थे। जब भी हमें एक दूजे से अपना प्यार जताने का थोड़ा भी मौका मिल जाता था हम चूकते नहीं थे। हम चुपके चुपके अपने तरह के प्यार एक दूजे के लिये जता देते थे।

समय मिलने पर हम दोनों एक दूसरे से अपने अपने निजी दिलचस्पी के अनुसार कितने गहरे गहरे समाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, पेशेवर और भावपूर्ण प्रेम की बातें करते रहते थे। हमारा यह प्यार का सिलसिला चलता रहा। हम एक दूसरे के नज़दीक आते गये। हमारी दोस्ती गहरी होती चली गई पर किसी को यह महसूस नहीं हुआ कि हम दो पंछी एक ही डाल पर बैठे खुशी से झूम रहे थे।

उस दिन मैं ने अपने दिल से पूछा था कि ऐ दिवाने बता यह कया बात है । मेरे दिल ने कहा था कि मेरे धड़कनो में छुपी एक नई राज़ है, एक मधुर आवाज़ है, एक सजा साज है जिसे हमें जाहिर करना था। मेरे लिये सब चाँद तारे, फूल भौंरे, हवा वादियां और यह नीला आसमा नये लगने लगे थे। जो मुझ को मिली थी उस में यह कौन सी बात थी, कौन जादूगरी थी ?

वही समय से मेरे मन में फिल्म तुलसीदास का यह सुरीला गाना बस गया था।

रहूं कैसे मैं तुम को निहारे विना रे मेरा मन ही न माने तुम्हारे विना

जाउं कहीं भी तो मन यहीं छूट जाये अंखियों से अंखियों का तार टूट जाये

मैं तो बना पपीहा तेरे प्यार में , जीउं कैसे मैं तुम को निहारे बिना

आके बसंत नई कलियों से खेले, चन्दा के घर में लागे सितारों के मेले

कैसे देखेंगे नयना नई चाँदनी, नई चुनरी में तुम को सिंगारे बिना

रहूं कैसे मैं तुम को निहारे बिना रे मेरा मन ही न माने तुम्हारे बिना ।

मैं ने अपने दिल से कहा था कि वह मेरी परी है जो मेरे लिये दुनियां में सब से हंसी थी, जिस की अदा सब से निराली थी और जिस के बिना मेरा जीना दुशवार था । तब मेरे दिल ने चिल्ला कर कहा था कि तब तो मुझे प्यार हो गया है इकरार हो गया है । यही सच था ।

उन दिनों मैं ने परदा तोड़क कलब का एक सदस्य बन कर देश के कई रंगमंच पर कितने नाटक किया था जिस से मेरे दिल में उन के लिये एक खास जगह बन गई थी । मैं जब चन्द्रगुप्त बना तो मानो वो मेरी छाया बन गई थी । जब मैं उस का राम हुआ तो वह मेरी सीता बनी और फिर मैं ने उन में कृष्ण की राधा सी खासियत भी देखने लगा था ।

मैं कोई होलीउड या बोलीउड का सितारा तो नहीं था पर मेरा दिल यह महसूस करने लगा था कि मैं उन के लिये किसी से कम नहीं था । मैं उन का हीरो बन गया था और वह मेरी एक मात्र हिरोइन बन गई थी । इस भावना को प्यार नहीं तो और कया कहें ।

दिन गुजर कर सप्ताह हुये और हफते बीत कर कई महीने हुये । इसी तरह हमारी घनिष्ट दोस्ती एक पवित्र प्यार में बदलती चली

गई थी । हम उस असीम रोमानी मोकाम पर पहुँच चुके थे जहां से हम लौटने का नाम नहीं ले रहे थे । शायरों और कवियों ने इनसान के इस सुन्दर स्थिति को पूर्ण परमानंद का नाम दिया है । हम भी उस पवित्र स्थान पर पहुँच चुके थे । यही हमारा समसरा या निर्वाणा था ।

लेकिन अब हमारी बैरी दिसम्बर भी आ पहुँची थी जब हम को एक दूसरे से बिछड़ने का समय सिर पर आ गया था । मेरा कोस पूरा हो गया था पर मेरी संघनी को अभी एक और वर्ष उसी कोलेज में बिताना था । मेरी तबादला या पहली पोसटिंग एक अध्यापक के हैसीयत से नये साल की जनवरी से बनुआलेबू के एक स्कूल बुनीका में हो गई थी । यही सब सोच हम को सताये जा रही थी क्योंकि अब हम एक दूसरे को निहारे बिना और एक दूजे से दूर कैसे रह सकेंगे ?

इस बीच सूबा के तेल कम्पनी में काम करने वाले मज़दूरों की एक बहुत बडी हडताल हो गई थी और हम सब को इतना अचानक जल्दी में कोलेज छोड़ कर जाना पड़ गया था कि हम एक दूसरे से ठीक से अलबिदा भी नहीं कह सके थे । ऐसा होने पर अकसर दो सच्चे प्यार करने वाले तडप उठते हैं पर उन के इस तरह से बिछड़ जाने से उन के प्रेम मोहब्बत में एक विचित्र सी घनिष्टता आ जाती है । यही हाल हमारा भी हुआ था । हमारी दूरियों ने हम को और भी नज़दीक लाने में मददगार साबित हुई थी ।

हम तो फिलहाल अपने आठ हफतों की छुट्टी बिताने अपने गाँव साम्बेतो पहुँचे और सरोज को अपने माता पिता के घर लौतोका जाना पड़ा । इस प्रेम कहानी को हम ने गुप्त ही रखा था इसलिये न

तो हमारे परिवार वाले और न ही हमारे यार दोस्त को इस का कोई एहसास था । यही तो हमारे प्यार की महानता थी जिसे हम एक पवित्र रिशता बना दिये थे । छिप छिप के प्यार करने में जो मजा होती है उसे खुल्लम खुल्ला प्रेम करने वाले कभी भी नहीं समझ सकते हैं ।

हम यह अच्छी तरह से जानते और मानते थे कि हमारे परिवार के लोगों से कभी भी हम को खुले आम मिलने जुलने की आजादी नहीं मिल सकती थी । हमारे प्यार को जिन्दा रखने के लिये हम को अपने समाज और अपने परिवार के बन्धनों में बन्ध कर रहना जरूरी हो गया था । हम किसी भी हालत में किसी के विरूद्ध नहीं जाना चाहते थे क्योंकि हम दोनों संस्कारी परिवार के जिम्मेदार सदस्य ठहरे । परिवार में सब से बड़े होने के नाते हमारे भी कोई वसूल थे और हम को सब के लिये एक अच्छा नमूना और आदर्श रखना हमारा फर्ज़ ही नहीं बल्कि हमारा कर्तव्य हो गया था ।

पर हम दोनों को अलग अलग अपना समय बिताना और दिन काटना भी बहुत मुशिकल हो गया था । न ही हम एक दूसरे को फोन कर सकते थे और न ही एक दूसरे को परसपर कहीं चाय पानी के लिये मिल सकते थे । इस बीच हम ने अपने कलमों का सहारा ले कर अपने जी बहलाये थे । पर दुख की बात तो यह थी कि इन पत्रों और कार्ड में हम केवल अपने दोस्ती के भाव ही दरसाया करते थे जिस से हमारे प्रेम का भेद खुलने पर भी हमारे परिवारिक जनों के दिलों में कोई शक की गुनजाइश ही न रहे ।

आठ हफते की स्कूल की छुट्टियां तो किसी तरह से खतम हुई और मैं पढ़ाने के लिये अपने नये पाठशाला बुनीका पहुँच गया । मेरी

प्रियतम वापस कोलेज चली गई जहां उस को स्टूडेन्टस कौन्सिल का उपप्रधान बना दिया गया था । यह उन के लिये एक बहुत ही बड़ी जिम्मेदारी थी जिसे सरोज को निभाना था । कोलेज के इतिहास मे वे पहली भारतीये युवती थी जिन को यह पद सम्भालने को दिया गया था । इस लिये हम दोनों को अपने हर कदम को बड़े सावधानी से उठाने पड़ते थे ।

इतना जरूर था कि अब हम पत्र व्योहार या तार द्वारा एक दूसरे से खुले आम सम्पर्क रख सकते थे । फिर भी हमारी दूरियां हम दोनों को बहुत सताती थीं । दिन को तो स्कूल में बच्चों और साथियों के साथ किसी तरह से गुज़र जाते थे पर जब हम अपने कमरे में अकेले होते थे तो रात कटती नहीं थी । नींद भी कोसों दूर चली जाती थी इसलिये मैं ने गज़ल और संगीत सुनने का शौक़ अपना लिया था । एक घायल लेखक के रूप ले कर मैं छोटी कहानियां और कवितायें भी लिखने लगा था । फीजी के साप्ताहिक पत्रिकाओं और रेडियो फीजी के माध्यम से मेरी कई कहानियां और कवितायें को जनता पढ़ और सुन चुकी थी ।

कबीर, रहीम, सूरदास और तुलसीदास जैसे मशहूर कवियों की रचनाओं को पढ़ना मेरी सब से बड़ी शौक़ बन गई थी । रंगमंच पर हम ने हरीदेव सुग्रीव के साथ स्यासथ समाज के हित कई नाटक खेले थे । इस से जो धन इक्ट्ठा किया गया था उस से अस्पताल में जरूरी अवजार लिये गये थे ।

इतने शुभ जीवन कार्य करते हुये भी कुछ दोस्तों के संगत के प्रभाव से मेरी एक बुरी लत पड़ गई थी । शराब कुछ दिन तक मेरी अस्थायी सहारा बन बैठी थी । यह बुरी लत अगर किसी को लग

जाये तो यह उन्हे बहुत जल्द खोखली कर देती है। यह ज्ञान मेरे मन में ठीक समय पर आ गई थी और मैं बरबाद होने से बाल बाल बच गया।

कभी कभी ऐसी भी घड़ी आ जाती थी कि मैं चुपके से रो रो के दिल की जलन को शान्त कर लेता था। लेकिन ज्यादातर खुले आम हंस हंस के काट देता था इस प्यार के नशे में क्योंकि मुझे मेरे प्यार पर पूरा भरोसा था, बिलकुल विशवास था। यही सोच कर की आज नहीं तो कल हमारे प्रेम की नैया भी प्यार भरे महा सागर में हिललोरें लेने लगेंगी और हम दो प्रेमी सफलतापूर्वक अपने जीवन के अभिप्राय की पूती कर लेंगे।

कभी कभी हमारे प्रेम भरे पत्र एक स्कूली पुस्तक का रूप ले लेती थी और हमारे फोन कोल घण्टों चलते थे। उस जमाने के मेरे कुछ मददगार दोस्त टेलीफोन कम्पनी में काम करते थे जिन के सौजन्य से मेरे फोन कोल करने की सुविधा भी हो जाती थी।

अगर आज उन सब प्रेम भरे पत्रों और बार्ताओं की रेकोर्ड रखी होती तो उन का संग्रह हमारे लिये एक आकर्षक पुस्तक का रूप ले सकती थी। दुःख इस बात की है कि यह सभी मोहब्बत के परचे या निशानियां या तो बाढ़ तूफान में बह गये या तो हमारे असली सुखदायक पारिवारिक तरंगो में कहीं खो गये।

हम अपने बीते हुये यादों को नहीं जुगो कर रखना चाहते थे पर अपने वर्तमान संतोषजनक और खूबसूरत जीवन के ललित स्थितियों, शुभ अवसरों और मंजुल घटनाओं का अराधना कर के अपने आज के पारिवारिक जीवन में अमन चैन की गुनजाईश लाने

की सफल कोशिश करते रहे । यही हमारे पवित्र रिशते की जीती जागती नमूना बन गई थी ।

देखते सुनते, खेलते कूदते और सोते जागते १९६० का साल का लम्बा समय भी भगवान की कृपा से और अपने खुद के करकमलों से सकुशल बीत गया । सरोज को कोलेज के अधिकारियों ने कई पुरस्कारों से सम्मानित किया था । कोलेज की सर्वश्रेष्ट विद्यार्थी, नेतागिरी का तगमा और उत्कृष्ट शिक्षक की उपाधि से उन को सुसज्जित किया गया था । माता पिता और सभी परिवार के लोग उन के प्रदर्शन से अति प्रभावित हुये थे और मैं तो फूला ही नहीं समाता था ।

मैं अपनी १९६१ की छुट्टी बिताने साम्बेतो आ गया था और सरोज चली गई नौसोरी क्योंकि उन के पिता की बदली वहां की सरकारी खजाने में हो गई थी । इस साल सरोज को भी नौसोरी के एक स्कूल में पढ़ाने के लिये भेज दिया गया था । उन का घर वइला पहाड़ पर स्थित था जहां से पूरे नौसोरी की सुहावनी दृष्य और रेवा नदी पर बने पुल की अदभुत छवि और छटा बड़े सुन्दर रूप से दीखाई देती थी ।

अब तक हम दोनों के परिवार वालों को हमारे रिशते की कुछ कुछ सुकसुकी लग चुकी थी । वे सब हमारे प्यार के रहस्य को जानने के लिये उत्सुक और उतावले हो रहे थे । मेरे उम्र के नौजवान सब शादीशुदा होते जा रहे थे पर मेरे माता पिता मेरे कहने पर कई शादी के प्रस्ताव को इनकार कर चुके थे ।

उन की इस चिन्ता को देख कर मुझे उन से अपने निजी पसंदगी को उन के सामने रखनी ही पड़ी । वे मेरे जीवन साथी खुद चुनने के निर्णय से बहुत खुश हुये पर उन का कहना था कि समाज के रीति रिवाज के मुताबिक मेरे विवाह की बातचीत लड़की वालों के तरफ से ही आनी चाहिये ।

बात कुछ दिनों के लिये यहीं पर टिक गई थी और हम दोनों के दिल पर मानो एक बिजली सी गिर पड़ी थी पर हम ने हिम्मत नहीं हारी । हम अपने मोहब्बत की धधकती आग को और भी उत्तेजित कर दिये थे अब उस का इजहार खुल्लम खुला करने की चाहत आ गई थी । अब सभी को मालूम हो गया था और सब को खबर हो गई थी की यह दो हंसो का जोड़ा एक खास बसेरा लेने के लिये पूरे तौर से तैयार बैठा था बस उन को उन के बुजुर्गों की आर्शिवाद की जरूरी थी ।

सरोज के तरफ के लोग भी उन की शुभ विवाह के लिये कई प्रस्ताव प्रस्तुत किये पर जब सरोज ने उन सब को नामंजूर कर दिया तब हमारे रिशते की बात को आगे बढ़ाने की समस्या सामने आ खड़ी हुई । हमारे समाज में हर एक योग्य कन्या के माँ बाप का यह फर्ज हो जाता है कि वे अपने बेटी के विवाह से पहले उस के होने वाले पति के बारे में ठीक से छानबीन कर के यह देख ले कि उन की बच्ची एक उपयुक्त वर और संस्कारी परिवार से नाता जोड़ रही है ।

सरोज के पढ़ाने का कार्य बुनिमोनो में दो वर्षों तक बडे सुचारू रूप से चलता रहा । कई नये लोगों से वहां उन की मुलाकात हुई, दोस्ती हुई और उन्हों ने वहां बहुत ही उन्नति की थी । इस बीच उन के

माता पिता ने एक पारिवारिक पंडित को गुप्तचर की तरह लम्बासा भेज कर मेरे बारे में बारीकी से पता लगाने की जिम्मेदारी सौंप दिया था।

सन् १९६२ के जुलाई महीने में गायत्री जी से मेरी मुलाकात हुई लेकिन मुझे यह नहीं मालूम था कि वे एक जासूसी करने के लिये आये थे। हमारी उन की विचार-विमर्श बुलीलेका के रामलीला के मैदान में दो तीन बार हुई जहां हम दोनों ने तुलसीदास और कबीरदास के रचनाओं पर विस्त्रित तौर से वार्तालाप किये।

गायत्री जी मेरे विचारों से बड़े प्रभावित हुये थे पर उन को मेरे शराब की आदत बहुत बुरी लगी थी। उन्हों ने मुझे इस लत को छोड़ देने की निवेदन भी की थी पर उस समय इस अनुरोध को अमल में लाना मेरे बस की बात नहीं थी।

बुलीलेका की रामलीला खतम हुई और गायत्री जी भी चले गये पर मुझे तो मेरे हाल पर ही छोड़ गये थे। मेरे और सरोज के लिये कोई ठोस नतीजे पर जल्द पहुँचना बहुत जरूरी हो गया था क्योंकि हम अब सबर करते करते थक गये थे।

इस जासूस गायत्री जी और मेरी विचार गोष्टी के बाद कुछ ही दिनों मे मुझे एक हस्थ लिखित चिटठी मिला जिस में पंडित चन्द्रपाल शर्मा के दस्तख़त थे। इस ख़त को मैं ने कई बार पढ़ा और उस में के हर शब्द की सही मतलब निकालने की कोशिश किया।

Thank You for previewing this eBook

You can read the full version of this eBook in different formats:

- HTML (Free /Available to everyone)
- PDF / TXT (Available to V.I.P. members. Free Standard members can access up to 5 PDF/TXT eBooks per month each month)
- Epub & Mobipocket (Exclusive to V.I.P. members)

To download this full book, simply select the format you desire below